Chap-7

सप्तम अध्याय

मूल्यांकन एवं उपसंहार

मूल्यांकन एवं उपसंहार

गुजरात का साठोत्तरी हिन्दी साहित्य स्वातंत्र्योत्तर मोहभंग की मानसिकता को वैसे ही उजागर करता है जैसे कि हिन्दीभाषी क्षेत्र के रचनाकारों की मानसिकता बदलते मूल्यों के तहत हताश और निराश होकर पराजित हुई है।

वैसे तो गुजरात में हिन्दी रचना का परिमाण और विविध विधाओं के प्रति सम्मोहन परिवर्द्धित ही हुआ है, किन्तु आजादी के बाद नैराश्यजन्य स्थिति ने गुजरात के रचनाकारों की मानसिकता को हताश अवश्य किया है।

अलगाव और अन्तराल का अनुभास सर्वत्र प्रसरित हुआ है, अंजना संधीर कहती हैं कि –

आपने तोड़ा तआल्लुक इस कदर अपनों के साथ,
अब गले मिलती नहीं दस्तक भी दरबाजों के साथ।।
अब के मेरे गाँव में तुम आए थे कुछ इस तरह,
दोस्ती गैरों से की और दुश्मनी अपनों के साथ।
दिल के दरवाजे पै दस्तक अब कोई देता नहीं,
जिन्दगी रोती फिरे है, लग के दीवारों के साथ।।

डॉ. अविनाश श्रीवास्तव आज की इस विषय परिस्थिति को सामने रखते हुए लिखते हैं कि –

घने अँधेरे प्रेत नहाते, जम्बूरे खुद बने मदारी,
कलके देखे सपने दुखते, रोके रुकें न अब सिसकारी

चाँद, सुहागिन की थाली में, देख सिसकती है पुरवाई।

गुजरात के साठोत्तरी साहित्य मे बदलते जीवन मूल्यों का संस्पर्श तो है किंतु गुजरात की मौजूदगी भी अपना अधिकार ज्ञापित करती है, जैसे –

उत्तर हो या हो दक्षिण, पूरब हो या कि पश्चिम,
सबको गले लगाती, गुजरात की हवाएँ।
दो चार दिन की खातिर, गर दूर इनसे जाते,
सपनों में आ बुलातीं, गुजरात की हवाएँ।।

बदलते मूल्यों के तहत घबराया हुआ आम आदमी अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा है, जैसे –

देखकर दिल की कहानी, आजकल,
रो रही है जिन्दगानी, आजकल।।
क्यों दया ममता, वफा और प्यार की,
बात लगती है पुरानी, आजकल।।
बात दिल की अब किसी के सामने,
है बहुत मुश्किल सुनानी, आजकल।।
हँस रही हैं नाफनियाँ मस्त हो,
रो रही हैं रातरानी, आजकल।।

(ऋषिपाल धीमान)

कमल पुंजाणी ने जीवन मूल्यों के समूचे वृत्त को सामने रखते हुए कहा है कि –

'जब भी मैं / आईने के सामने / खड़ा होकर / अपने को / पहचानने की कोशिस करता हूँ / कई जंगली चेहरे / शीशे पर उभर आते हैं / पारिभाषित आदर्शों पर / लग जाते हैं पहरे / जीवन दर्शन सभी / छले-से लगते हैं / अंधी होकर भटकती हैं / आँखें इधर उधर / हर तरफ / छितराते हैं / अँधियारे गहरे /'

प्रख्यात साहित्यकार और कवि किशोर काबरा कुछ इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं –

शिखर की पीड़ा / बिखरती खाइयों में /
खाइयाँ सब / अतल की गहराइयों में /
आँसुओं के कब रुके हैं पाँव रे।
जिन्दगी जैसे पहाड़ी गाँव रे।

* * *

तह किए सपने बिछे हैं खेत बनकर।
खेत सारे मर चुके हैं रेत बनकर।
जी रही चीड़ ओढ़े काँव रे।
जिन्दगी जैसे पहाड़ी गाँव रे।।

डॉ. विष्णु विराट कुछ और तीखे स्वरों में आज की विषम और निराशमय स्थिति को काव्यांकित करते हुए कहते हैं –

सुबह से हाथ में पत्थर लिए, मैं घूँमता रहता,
बड़ा बेसब्र हँ, वह कांच का चेहरा नज़र आए।
जुबाँ के जोर को क्या फूकेंगी ये बन्दूकें,

शहर-दर-शहर फैले हैं, हमारे दहकते साये।

* * *

चले थे वे बनाने बाँसुरी हमको बजाने की,

पता उनको न था, इन हड्डियों से बज्र बनता है।

हमारे खूँन से इतिहास में सुर्खी उतरती है।

हमारे हौशलों से दुश्मनों का दिल दहलता है।

गोपीनाथ चौबे इसी भाव चिन्तन को अग्रसर करते हुए कहते हैं -

शांति के नाम यदि युद्ध चलते रहे,

शव तरसने लगेंगे कफन के लिए।

सारी दुनियाँ यहाँ एक परिवार है,

भावना थी जरूरी अमन के लिए।

ठेस दिल में किसी के लगाओ नहीं।

खेत में गोलियों अब उगाओ नहीं।

भाग सुख का सभी को बराबर मिले,

न्याय से आँख अपनी चुराओ नहीं।

छोड़िये भूमि को रक्त से सींचना।

भेजिए मत मिसाइल गगन के लिए।।

सर्वत्र निराशा का अंधकार, दमघे महँगाई की मार, राजनीतिक भ्रष्टाचार का अभिशाप, दमन, शोषण, अन्याय, अनीति आदि का बोलबाला – ये सब विषमताएँ आम आदमी की खुशियों पर तुषारायात ही हैं। चन्द्रपाल सिंह यादव के स्वर में –

इस मुल्क में सुख चैन से, जीने न देंगे लोग।

अपने गमों पर भी हमें रोने न देंगे लोग।।

कुत्तों गधों की जिन्दगी तो जी चुके हैं खूब,

अब हादसे की मौत भी मरने न देंगे लोग।

गर तैरना ही चाहता तो लाश बनकर तैर,

जिन्दा तुझे दर्याब में तिरने न देंगे लोग।।

डॉ. किशोर काबरा ने इस जीवन संघर्ष को और भी स्पष्ट करते हुए लिखा है –

जन्म से लेकर मरण तक, दौड़ता है आदमी।

दौड़ते ही दौड़ते दम तोड़ता है आदमी।।

आँख गीली, होठ ठंडे, और दिल में आंधियाँ,

तीन मौसम एक ही सँग, ओढ़ता है आदमी।।

एक अन्य रचना में आजादी के मोहभंग की स्थिति से रू-ब-रू होते हुए किशोर काबरा कहते हैं –

मैं अँधेरे से डरा तो रोशनी में आ गया।

रोशनी किंतु फिर से आ गईं परछाइयाँ।।

लगभग इसी मोहभंग की मानसिकता को व्यक्त करते हुए दयाचन्द्र जैन कहते हैं –

नये पंथ पर पग धरते ही, छाले पाले पाँव रे,

भीतर शीतल आग सुलगती, जाने कैसी छाँव रे।

मरहम मिला न कोई जिससे पग का रहे लगाव रे,

तन का भर जाता है, पर मन का भरे न घाव रे।।

इसी भावस्थिति को एक अलग तेवर में व्यक्त करते हुए विष्णु विराट कहते हैं –

ये कुहासा तो हाथों से हटता नहीं,

धुंध आँखों में आखिर जगह पा गई।

सूर्य की बंदगी में झुका इतना सिर,

ठंड बस्ती में घर ढूँढ़ने आ गई।

जंग से लौटते घुड़सवारों के रुख,

फिर हरी दूब को रौंद कर बढ़ गए।

फिर जुही कब्र से झाँक कर सो गई,

फिर परिन्दे यहाँ मर्सिया पढ़ गए।।

खुदकुशी कर रहे गाँव की लाश पर

कारखाने पहन चिमनियाँ आ गए।

खौफ़ उगने लगा फिर शहर–दर–शहर,

लोग फिर बीहड़ों में रवाना हुए।।

एक लादी हुई भूख ने, वक्त की,

गर्दनों को शिकंजे में फिर कस लिया।

मावसी रात की अंध से बच गए,

आदमी को सुबह धूप ने डस लिया।

डॉ. अविनाश श्रीवास्तव भी इसी भावभूमि को अपनी विशिष्ट पहचान के साथ व्यक्त करते हैं –

''तुमने महसूसा नहीं आज तक / लहू टपकती आँखों का / विप्लवी मौन / भूख के कारण / सद्य–प्रसूता के सूखे पयोधरों की विवशता / बंधन के परिजन में / आगत वैधव्य का आतंक / सामूहिक बलात्कार की / शिकार / किसी खिलती कली की विवशत विक्षिप्तता / किताबी क्रांति / और मौखिक सदाचार की डुगडुगी / बजाना बन्द कर देखो / कब से झूठ की ड्यूढ़ी पर / हर सनातन सच / श्वान–सा दुम हिला रहा है।''

गुजरात के कुछ ऐसे गज़लकार भी हैं जिन्होंने अपने उत्कृष्ट और विशिष्ट सृजन से राष्ट्रीय पहचान बनाई हैं। ऐसे रचनाधर्मियों में भगवानदास जैन का उल्लेखनीय स्थान है। उन्होंने इस कालधर्म की परिवर्तित विद्रूपता को झकझोरते हुए और व्यवस्था के छद्म आवरण का पर्दाफाश करते हुए बहुत कुछ कटु सत्य लिखा है। वह कहते हैं –

सिद्धियों के नाम पर इतना मिला है।

यातनाओं का निरंतर सिलसिला है।

* * *

लेप की अब क्या जरूरत बंधु मेरे,

नागफनियों से बदन सारा छिला है।

क्यों न पथ में पाँव उसके डगमगाएँ,

सिर पै जिसके सैकड़ों मन की सिला है।

अन्यत्र एक गजल में वह इसी मोहभंग की स्थिति की असल पीड़ा को व्यक्त करते हुए लिखते हैं –

हरेक सिम्त दहकते हुए सवाल तो देख,

कभी उठाके नज़र जिन्दगी के हाल तो देख।।

* * *

बड़ी उम्मीद थी गुजरेगा खैरियत से सफर,

हमारी जान के पीछे कई बवाल तो देख।।

* * *

बगैर सर के यहाँ सिर्फ धड़ चला करते,

हमारे मुल्क का एँ दोस्त यह कमाल तो देख।।

एक अन्य ग़ज़ल में भगवानदास जैन का कथन है कि –

जब लुटेरे ही बने पहरी खड़े हो,

सोचिये उस घर का क्या कल्याण होगा।

* * *

है चतुर्दिक व्याघ्र हिरनी काँपती है,

हाय उसका किस तरह परित्राण होगा?

* * *

जयद्रथों का वध सुनिश्चित है मगर जब,

पार्थ के गांडीव पर फिर बाण होगा।।

घनश्याम अग्रवाल अपे जुझारु तेवर में इस भाव सम्पदा को स्वर देते हुए कहते हैं–

अंधकार बैठा है करने युद्ध किरन से।

तूफ़ां बैठा है शक्ति नापने दीपक से।

प्रलय घटाएँ बहुत दूर तक छाई हैं।

अंधकार में दसों दिशा भरमाई हैं।।

सुल्तान अहमद नई कविता और ग़ज़ल के सशक्त हस्ताक्षर है। समय की धड़कनों पर हाथ रखते हुए वह कहते हैं –

रास्ते जब नये बनाओगे।

कुछ तो काँटे जरूर पाओगे।।

* * *

आ गए जो शहर के धोखे में।

रास्ता घर का भूल जाओगे।।

* * *

तुमको सच बोलने की आदत है।

कैसे हर एक से निभाओगे?

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
M. S. University of Baroda
451

एक दूसरी गज़ल में वह परिवर्तित परिवेश की घृणित तस्वीर पेश करते हुए कहते हैं –

नज़र ये किसकी लगी, जर्द हो गए पत्ते,
अभी अभी तो दरख्तों पे थे हरे पत्ते।

* * *

कहाँ कहाँ न भटकते हुए मिले पत्ते,
कभी तो दूर करके पेड़ से गिरे पत्ते।

* * *

हवा कुछ ऐसी चली है कि ख़ौफ फैला है,
मगर रहेंगे कहाँ तक डरे डरे पत्ते?

भावनगर के प्रतिष्ठित रचनाधर्मी नयना डोलीवाला एक प्रतिष्ठित कवियित्री हैं, समय की जंग में हिस्सेदारी का निर्वाह करती हुई वह कहती हैं –

मलवे में दबा शहर,
आकाश में तैरती परछाइयाँ,
अँधेरा और गहरा गया।

किसी की जिन्दगी की लाश को / कंधे पर रखकर / बेतिहासा दौड़ती हूँ / यकायक / फैलती रोशनी में / लाश ने कंधे से उतरकर कहा / बस, यहीं तक जाना था / शायद किसी और को / जरूरत हो / तुम्हारे कंधों की /

गुजरात के कवि-सम्मेलनीय मंच को अपने जुझारू उद्घोषों से गुंजायमान करने वाले हिन्दी के वरिष्ठ साहित्य सृष्टाओं में डॉ. नवीन प्रकाश सिंह 'नवीन' किसी परिचय के मुहताज नहीं है। वह सम्प्रति इस समय की विभीषिका को चुनौती देते हुए कहते हैं –

बहुत दिनों से तम-प्रकाश में देवासुर संग्राम छिड़ा है,
कितना लहू बहा है लेकिन पीड़ी हार नहीं मानेगी।
अंधकार राक्षस ने यद्यपि जीत लिया है कौना-कौना,
दीपशिखा घर घर की लेकिन, युद्ध अँधेरे से ठानेगी।

* * *

शंखनाद कर रहीं दिशाएँ, समरभूमि हर घर आँगन है,
चक्रव्यूह रच रहा अँधेरा, द्वार तोड़ने कठिन पड़ेंगे।
रोक न पाएगा यह आँधी, अब अभिमन्यु अकेला कोई,
शुभ प्रभात की बेला होगी, जब कृष्णार्जन साथ लड़ेंगे।।

वस्तुतः गुजरात की धरती हिन्दी साहित्य के लिए अत्यंत उर्वरा सिद्ध हुई है। सम्प्रति यहाँ शताधिक सशक्त हस्ताक्षर हिन्दी साहित्य सृजन में समर्पित हैं। काल सापेक्ष रचनाएँ हर युग में अपनी समर्थ भूमिका का निर्वाह करती रही हैं। साहित्य और संस्कृति के सुखद पल्लवन के लिए यहाँ की अनुकूल प्रकित सदैव गुलजार रही है।

आजादी के बाद की विषम स्थितियों ने आदमी को जिन्दा रहने के संघर्ष ने कमजोर कर डाला। पूँजीवादी तथा साम्राज्यवादी शक्तियाँ उभरकर सामने आ गईं जिन्होंने सम्पूर्ण व्यवस्था और सत्ता को खरीदकर अपना गुलाम बना लिया। गरीब और गरीब हो गया। मध्यवर्ग के सामने संघर्ष और गहरा होता चला गया। भ्रष्टाचारी, चोरबाजारी, फरेब,

और धोखाधड़ी की राजनीति ने सब कुछ नष्ट कर दिया। आम आदमी का वजूद ही खतरे में डाल दिया है। व्यवस्था के षड्यंत्र को चुनौती देते हुए डॉ. विष्णु विराट कहते हैं –

या तो तू जान ले खुद अपनी हकीकत एँ विराट
वरना हम अपने तरीके ही से समझाएँगे।
राख के नींचे अलावों को हवाएँ मत दे
वरना ढूँढ़े भी निशां तेरे न मिल पाएगा।
नौंच ले वक्त के चेहरे पै चढ़े जो भी नकाब
कलम के साथ कलमदार की इन्साफी है।
जिनको जीन है वे मर्दों की तरह जी लेंगे।
वरना मरने को तो गांधी की कसम काफी है।

स्वतंत्रता के बाद गुजरात के हिन्दी कवियों ने जो क्रांति का शंखनाद किया, वह राष्ट्र के विहद क्षितिज तक निनादित हुआ है। यहाँ के राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाने वाले रचनाकारों ने बहुत ही श्रेष्ठ और यथार्थवादी चिंतन से सम्प्रक्त रचनाएँ प्रस्तुत की हैं।

यहाँ के समर्थ और प्रख्यात रचनाकारों में विशेष रूप से उल्लेखनीय कवि इस प्रकार हैं – प्रो. अम्बाशंकर नागर, अंजना संधीर, अविनाश श्रीवास्तव, इन्दिरा दीवान, अश्विनीकुमार पाण्डेय, ऋषिपाल धीमान, कमल पुंजाणी, किशोर काबरा, कृष्णा गोस्वामी, कैलाशनाथ तिवारी, क्रांति येवलेकर, गोपीचंद चौबे, गोवर्द्धन शर्मा, घनश्याम अग्रवाल, चन्द्रपाल सिंह यादव, जयसिंह व्यथित, द्वारका प्रसाद साँचीहर, नलिनी पुरोहित, नवीन प्रकाश 'नवीन', नवनीत ठक्कर, नवनीत गोस्वामी, निर्मला असनानी, प्रभास शर्मा, वसंत परिहार, भगवत शरण अग्रवाल, भागवत प्रसाद मिश्र नियाज़, मंजु भटनागर, रमाकांत

शर्मा, रमेशचंद्र शर्मा 'चन्द्र', राजेन्द्र काजल, रामचेत वर्मा, विष्णु विराट, शेखर जैन, सविता गौड, सुधा श्रीवास्तव आदि का नाम प्रख्यात है।

हिन्दी ग़जल मे प्रो भगवानदास जैन, हाइकू रचना में प्रो. भगवत शरण अग्रवाल, प्रबंध काव्य रचना में प्रो. अम्बाशंकर नागर, प्रो. विष्णु विराट तथा डॉ. किशोर काबरा, नई कविता में वसंत परिहार तथा अविनाश श्रीवास्तव ब्रजभाषा काव्य रचना में द्वारका प्रसाद साँचीहर तथा विष्णु विराट, शोध लेखन में डॉ. रामकुमार गुप्त, प्रो. मदन गोपाल गुप्त, डॉ. रमणलाल पाठक आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

साठोत्तर काल के गुजरात के हिन्दी साहित्यकारों ने अपने वरिष्ठ साहित्य सृजन से वक्त की धडकन को टटोला भी है तो व्यवस्था की विद्रूपता से परिचय भी कराया है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध के माध्यम से प्रथम बार विस्तृत पटल पर साठोत्तर काल के गुजरात के साहित्यकारों के विशिष्ट प्रदान को रेखांकित किया गया है।

गुजरात के शताधिक ज्ञात, अल्पज्ञात तथा अज्ञात साहित्यकारों के कृतित्व को विवेचित किया गया है। तथा गुजरात के साहित्य सृजन के विविध आयामों की भी मीमांसा की गई है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध में गुजरात में सृजित स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी-साहित्य की सांस्कृतिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि को रेखांकित करते हुए यहाँ की उदात्तवादी मानसिक-भावभूमि को भी सामने रखा गया है।

गुजरात में हिन्दी साहित्य सृजन की पूर्ववर्ती पृष्ठभूमि तथा मध्यकालीन प्रकृति को लेखांकित करते हुए यहाँ के रचनाकारो की बदलती जीवन दृष्टि और गांधीवादी उदार मनस्थिति के परिप्रेक्ष्य में संवेदना और भावना के स्तर पर कृतित्व के वर्ण्य को विवेचित किया है।

स्वातंत्र्योत्तर साठवें दशक से आजादी के बाद जो मोहभंग की स्थिति पैदा हुई है, उसे गुजरात के रचनाकारों ने भी अपनी दृष्टि से काव्यांकित किया है तथा अपने बदलते हुए नजरिये को सामने रखा है। साठोत्तर काल के साहित्यकारों में आक्रोश भी है और इन्कलाब भी। व्यवस्था के प्रति विरोध के तेवर भी हैं और बदलते मूल्यों के प्रति असहमति भरा विरोध भी है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध यहाँ के जागरुक साहित्यकारों के रचनादायित्व को ईमानदारी के साथ प्रस्तुत करता है तथा उनके विशिष्ट प्रदान को समीक्षित भी करता है।

आशा है गुजरात के तथा गुजरातेत्तर अन्य प्रान्तों के भी अध्येताओं एवं विद्वान समीक्षिकों के लिए यह शोध प्रबंध उपादेय सिद्ध होगा।